International Journal on Science and Technology (IJSAT)
E-ISSN: 2229-7677 ● Website: www.ijsat.org ● Email: editor@ijsat.org

हिंदी नाटक एवं रंगमंच का बदलता स्वरूप

डॉ श्याम सिंह

सह -प्राध्यापक, हिंदी विभाग
राजकीय महाविद्यालय बरोटीवाला
जिला सोलन हिमाचल प्रदेश
दूरभाष नंबर : 9816201449
ईमेल drshyamsingh.sml@gmail.com

नाटक साहित्यिक अभिव्यक्ति की ऐसी विधा है जो केवल साहित्य नहीं, उससे अधिक कुछ और भी है, क्योंकि रचना की प्रक्रिया लेखक द्वारा लिखे जाने पर ही समाप्त नहीं होती, उसका पूर्ण प्रस्फुटन और संप्रेषण रंगमंच पर जाकर ही होता है। रंगमंच पर अभिनेताओं द्वारा प्राण-प्रतिष्ठा के बिना नाटक को सम्पूर्णता प्राप्त नहीं होती और इसलिए रंगमंच से अलग करके नाटक का मूल्यांकन या उसके विविध अंगो और पक्षों पर विचार अपूर्ण ही नहीं, भ्रामक हो जाता है। डॉ नरेन्द्र मोहन के अनुसार ‘‘हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूरे हो चुके हैं। 1950 से पहले के हिन्दी नाटक को देखें तो यह कहा जा सकता है कि भारतेन्दु और जयशंकर प्रसाद को छोड़कर कोई भी महत्त्वपूर्ण नाटककार नहीं हुआ। ठीक यही बात 50 के बाद के नाटक के बारे में नहीं कही जा सकती। आज़ादी से पहले और अज़ादी के लगभग दस साल बाद तक हिन्दी रंगमंच के नाम पर पारसी थियेटर ही छाया रहा। आगा हश्र कश्मीरी के नाटक हों या फिर पृथ्वीराज कपूर के, इनके केन्द्र में पारसी रंग शैली ही काम कर रही थी। ’’ [1]

भारतेन्दु काल में, भारतेन्दु के नाटकों, प्रमुखतः 'अंधेर नगरी' और 'विधासुंदर' के मंचनों ने हिन्दी रंगमंच को गरिमायुक्त किया। जयशंकर प्रसाद ने अपने समय में ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से सम्पन्न नाटक तो लिखे लेकिन मंचन के लिए हिन्दी रंगमंच उसके लिए उपयुक्त नहीं था। रंगकर्मियों को भी उनके नाटक रंगमंच के अनुकूल नहीं लगते थे। रंगमंच से जुड़ने की प्रक्रिया उपेन्द्रनाथ अश्क ने शुरू की। अश्क के नाटक रंगमंच की दृष्टि से थोड़े से परिवर्तनों के साथ सजीव हो उठते हैं। अश्क के नाटकों का एक प्रमुख आकर्षण उनकी भाषा है जोकि जन-साधारण के जीवन की भाषा है | इन्होंने 'कोणार्क', 'षारदीया' और 'पहला राजा' की रचना की। इन नाटकों में रंगमंच की दृष्टि से 'पहला राजा' 'सर्वाधिक चर्चित और मंचित हुआ। जगदीशचन्द्र माथुर के नाटकों की एक सबसे बड़ी उपलब्धि यह भी है कि उन्होंने लोक नाट्य परंपरा के व्यवहारों का पहली बार प्रयोग करते हुए हिन्दी नाटकों को अगले पड़ाव तक पहुँचाया। माथुर लोक नाट्यरूपों के ज्ञाता रहे है। इस प्रकार अश्क के बाद माथुर के नाटक अपनी चरित्र-परिकल्पना, नाटकीय संभावनाओं, वातावरण सृष्टि, दृश्य योजना, चित्रण शक्ति, नाटक की विकास गतियों और संयोजन में अधिक प्रभावशाली लगते हैं। उन्होंने नाट्य भाषा को सघनता, काव्यात्मक सौंदर्य और अन्तरंगता भी दी।" रंगमंच सम्बन्धी माथुर के विचार "उनकी धारणा है कि भारत में जीवन्त रंगमंच का निर्माण तभी संभव होगा जब हम उसे अपनी सुदीर्घकालीन लोक-रंगमंच-परंपरा के संदर्भ में देखेंगे।" [2]

हिन्दी नाटक और रंगमंच के आपसी गहरे और सर्जनात्मक रिश्ते की शुरूआत, हिन्दी नाटक के इतिहास में अनिवार्य परिवर्तन का आरम्भ धर्मवीर भारती के 'अंधायुग' और मोहन राकेश के 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक से होता है। डॉ० वीणा गौतम के अनुसार-"अंधायुग की रचना भारती ने रंगमंच के लिए ही की, इस कारण रंगमंच ही उसकी रुप-अवधारणा का प्रेरक और नियामक बन कर हमारे समक्ष आता है।[3]

मोहन राकेश ने अपने नाटकों के माध्यम से हिन्दी रंग-जगत में नये प्रतिमान स्थापित किए। राकेश ने अपने नाटकों में संवादों को तराशा है |मोहन राकेश के समकालीन लक्ष्मीनारायण लाल, सुरेन्द्र वर्मा तथा मुद्राराक्षस आदि नाटककार है जिन्होंने हिन्दी नाटक रंगमंच को समृद्ध बनाने हेतु अनेक नाटकों की रचना की। लक्ष्मीनारायण लाल समकालीन समय के ऐसे नाटककार है, जिन्होंने सर्वाधिक नाटकों की सर्जना की है। इनके छोटे-बड़े नाटकों को मिलाकर कम से कम इनके नाटकों की संख्या 50 से अधिक है। मोहन राकेश जब हिन्दी रंगमंच पर छाए हुए थे उसी समय एक और समकालीन नाटककार सुरेन्द्र वर्मा का उदय होता है जो अपनी 'द्रौपदी',

'सूर्य की अन्तिम किरण से, सूर्य की पहली किरण तक', 'नायक', खलनायक, विदूषक', 'सेतुबंध', 'आठवां सर्ग', 'शनिवार के दो बजे', 'वे नाक से बोलते हैं, 'नींद क्यों रात भर नहीं आती' आदि नाट्य रचनाओं से हिन्दी रंगमंच को प्रभावशाली बनाने का कार्य किया। सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों के अधिकांश मंचन राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के रंगरत दल द्वारा किए गये।

गिरीश रस्तोगी के अनुसार-"सुरेन्द्र वर्मा ने हिन्दी नाटक और रंगमंच को नवीन सौदर्यबोध और काम-संबंधों के अन्तर्विष्लेषण की सक्षमता के साथ-साथ तकनीकी पूर्णता, नाट्यभाषा का अत्यंत प्रभावी, अभिनयात्मक, हरकत-भरा, भाव-भरा रुप दिया।"[4]

सर्वेश्वर मूलरूप से तो कवि हैं लेकिन 'बकरी' और 'लड़ाई जैसे प्रभावशाली नाटकों की रचना, उन्होंने की है। 'कल भात आएगा' तथा हवालात' उनके लघु नाटक हैं। 'लडाई' नाटक में सर्वेश्वर ने समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का वर्णन किया है तो वहीं 'बकरी' नाटक में नौटंकी शैली के माध्यम से गरीबों के शोषण का विरोध किया है। 'बकरी' नाटक साधारण मनुष्य की पीड़ा को, आम आदमी की जुबान में प्रस्तुत करता है। समकालीन नाटकों में, समसामयिक जीवन की पारिवेषिक विसंगतियों, पीड़ाओं और विषमताओं को नाटक का कथ्य बनाया गया। सामान्य जन की पीड़ा, हताषा, निम्नवर्गीय एवं मध्यवर्गीय लोगों का शोषण, व्यवस्था एवं सत्ता का विरोध और विद्रोहात्मक प्रवृत्ति को कथ्य में प्रस्तुत किया गया।

समकालीन नाटककारों के नाटक का सबसे चर्चित और वर्णित विषय स्त्री-पुरुष संबंधो की मूल्यहीनता रहा है। मोहन राकेश का 'आधे-अधूरे,' 'लहरों के राजहंस,' लक्ष्मीनारायण लाल का 'व्यक्तिगत' और यहाँ तक कि सुरेन्द्र वर्मा का नाटक 'सूर्य की अंतिम किरण से, सूर्य की पहली किरण तक' का कथ्य पति की नपुंसकता की स्थिति में नारी द्वारा दूसरे पुरुष का सहवास के लिए चुनाव करना हिन्दी रंगमंच और नाटक द्वारा नये मूल्यों की तलाश करना जैसा ही लगता है समकालीन हिन्दी नाटकों में पहली बार मानवीय संवेदना को धरातल से जोडकर सूक्ष्मता से उभारने का प्रयास किया गया और जीवन से निरन्तर संघर्ष करता हुआ आज का मज़दूर आदमी समकालीन नाट्य रचनाओं में विविध रुपों में चित्रित हुआ। समकालीन हिन्दी नाटकों में जीवन का पूर्ण स्पन्दन देखा जा सकता है। डॉ० शेखर शर्मा लिखते हैं- "1970 में या 1960-1970 में हुए लेखन ने अपने काल, देश, व्यक्ति को पहचाना और व्यक्ति-व्यक्ति ने समूहों के वास्तविक प्रसंगों तक अपनी पहुँच का परिचय दिया। लेखन का मूलस्वर 'व्यवस्था - विरोध का स्वर' बन गया। सामाजिक दबावों के संदर्भ में नये सत्य की खोज की गयी उन्होंने स्वयं को व्यवस्था का क्रीतदास नहीं बनाया। पीड़ित एवं तिरस्कृत आम आदमी की मुक्ति का पक्षधर यह लेखन बना।[5]

समकालीन हिन्दी नाटकों को रंगमंचीय विकास और प्रभावशाली बनाने हेतु जहाँ एक ओर राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय का विशेष योगदान रहा है तो वहीं विभिन्न नाट्य मण्डलियों जैसे कि 'इंडियन पीपुल्स थियेटर एसोसिएशन, दिशान्तर, अभियान, अग्रदूत, प्रयोग, हम सब, सम्भव, नया थियेटर, रुचिका,यान्त्रिकी, छायानट' को नज़रअन्दाज नहीं किया जा सकता। अस्तु हिन्दी रंगमंच पिछले पैन्तीस- चालीस सालों में काफी विकसित हुआ। पश्चिमी जगत की रंग शैली से मुक्त होकर भारतीय परम्परा की महान लोक नाट्य की ताकत को पहचानकर, लोक नाट्य शैलिओं की ओर आकर्षित हुआ है। नौटंकी, भवई, यात्रा, नाच, आदि अनेक शैलिओं को उसने आत्मसात किया है। एक सम्पन्न थियेटर, एक सम्पन्न हिन्दुस्तानी रंगमंच की स्थापना के लिए नाटककार और रंगकर्मी प्रयासरत है। कविता, कहानी और उपनयास भी हिन्दी रंगमंच का हिस्सा बने है। स्त्री-पुरुष संबंधों के घेरे से मुक्त होकर सातवें तथा आठवे दशक के नाटककारों ने सामाजिक सरोकारों का निर्वाह करते हुए उनके नाटक स्वस्थ मानवीय मूल्यों की स्थापना की ओर अग्रसर हुआ है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी में इस विधा का वर्तमान रूप में सूत्रपात किया था। उन्होंने नई भाषा और शैली में नाटक लिखे और उसके बाद हिन्दी रंगमंच की स्थापना की थी। भारतेन्दु युग के बाद प्रसाद युग में जयशंकर प्रसाद के नेतृत्व में हिन्दी नाटक ने कथ्य और शिल्प की गंभीरता धारण की। प्रसाद ने अपने नाटकों में पूरे भारतीय परिवेश में भारतीय इतिहास, संस्कृति, भाषा और शिल्प को जो उर्जा प्रदान की, वह आगे के हिन्दी नाटकों के लिए अनुकरणीय बना। भारतेन्दु के पश्चात् जयशंकर प्रसाद नाट्य-कला को लेकर आगे चले, जहां जयशंकर प्रसाद ने छोड़ा वहां से मोहन राकेश और जगदीश चन्द्र माथुर उसे लेकर आगे चले। "मोहन राकेश की मृत्यु के बाद हिन्दी नाट्य लेखन में तेजी आई मोहन राकेश की ख्याति से प्रभावित होकर अनेक साहित्यकार नाट्यलेखन की ओर उन्मुख हुए |बहु चर्चित कथाकारों अथवा कवियों ने भी इस विधा को समृद्ध किया। इसके साथ नाटक रंगमंच के ओर अधिक निकट आया तथा अनेक नाटकों का सफलतापूर्वक मंचन हुआ।"[6]

कथ्य के धरातल पर आधुनिक नाटक बहुरंगी है। समसामयिक जीवन की समस्याओं, अलग-अलग रंगों, आपसी और वैचारिक द्वन्द्वों, विभिन्न विचारधाराओं और आयामों, आम आदमी की विड़म्बित स्थिति के साथ-साथ वह सत्ता के मुखौटे को भी बेनकाब करता है। जैसे कि नाटककार गोविंद पुरूषोत्तम देशपाण्डे का नाटक

'रास्ते' में द्वन्द्वात्मक स्थिति को स्पष्ट किया गया है। "रास्ते प्रतिबद्धता के अलग-अलग रंगों और स्तरों के आपसी द्वन्द्व की कहानी कहने वाला नाटक है। विभिन्न विचारधाराओं और वैचारिकनिष्ठ भारतीय लोक नाट्य : एक परिचर्या के विभिन्न आयामों के कई सारे रास्ते यहां इस नाटक के मंच पर आकर मिलते है |संघ बनाम कांग्रेस बनाम साम्यवाद की तीखी, आक्रामक बहसें यहां हैं तो सूत्रधार के रूप में तकरीबन तटस्थ उदारवाद का निर्लिप्त-सा दिखने वाला दृश्यावलोकन भी है और सशस्त्र क्रांति में यकीन रखने वालों की एकरेखीय निर्द्वंद्व प्रतिबद्धता भी है।[7]

हिन्दी के अनेक आधुनिक नाटककारों ने स्त्री को केन्द्र में रखकर भी उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं को अपने नाटकों के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। नारी के विभिन्न रूपों, विभारतीय लोक नाट्य : एक परिचयविध मुद्राओं, विभिन्न स्थितियों का सफलतापूर्वक चित्रण किया है। जैसे-जैसे हिन्दी साहित्य लोकप्रिय होता गया वैसे ही हिन्दी की अन्य गद्य विधाओं की भांति हिन्दी नाटक के क्षेत्र में भी प्रगति हुई। आज का हिन्दी नाटक रंगमंचीयता को विशेष रूप से ध्यान में रखकर लिखा जा रहा है। जिस प्रकार मोहन राकेश के 'आधे-अधूरे' में पुरुष एक, पुरुष दो, पुरुष तीन की जिस रंगयुक्ति का प्रयोग हुआ वह नामहीन पात्रों के रूप में इधर विकसित हुई है। हिन्दी नाटक को रंगमंच से जोड़ने का जो आरंभ 'अश्क' से हुआ था, वह अब अपने चरम पर है। वस्तु विधान, रंग दृष्टि, चरित्र-सृष्टि और नाट्य-भाषा में काफी बदलाव आये हैं। आज के नाटक स्वाभाविकता की ओर मुड़ने लगे हैं। नाटकों में विषय की विविधता, है। कथानक में मानसिक द्वन्द्व का अच्छा चित्रण होने लगा है। पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों में अपेक्षित पात्रों को प्रमुखता दी गई और ऐतिहासिक नाटकों में तो इतिहास गौण हो गया है | परम्परा और आधुनिकता के अंतः संघर्ष से समसामयिक हिन्दी नाटक ने नयी राहों का अन्वेषण कर भूमियों को छुआ है। फलतः कथ्य और शिल्प की दृष्टि से अब उसका व्यक्तित्व बहुरूपी, बहुरंगी और बहुआयामी हो उठा है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची :

1. समकालीन हिन्दी नाटक और रंगमंच-सं० डॉ० नरेन्द्र मोहन, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ० 103
2.आधुनिक हिन्दी नाट्यकारों के नाट्य सिद्धांत – डॉ० निर्मला हेमन्त, अक्षर प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, पृ० 386
3. हिन्दी नाटक- डॉ० वीणा गौतम, के. के. पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ० – 20
4.समकालीन हिन्दी नाटककार- गिरीश रस्तोगी, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 17
5. समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक डॉ० शेखर शर्मा, भावना प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 63
6. अज़गर वजाहत : जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नई, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, प्र.सं. 2001
7. गोंविंद पुरूषोत्तम देशपाण्डेः रास्ते, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, बहावलपुर हाउस, नई दिल्ली-110001ए प्र.सं. 1999